चित्शक्ति विलास

स्वामी मुक्तानन्द

एक रामजा नाम का चरवाहा था। वह बड़ा धनवान था। वह अपने इष्टदेव खंडोबा और उसके वाहन की स्वर्ण मूर्तियों की पूजा करता था। खंडोबा का वाहन घोड़ा, मूर्ति से बड़ा था। महापुरुषों का कथन कि लक्ष्मी चंचल है, वस्तुतः सही है। स्थिर कुछ भी रहने वाला नहीं है। दिन बदलते रहते हैं। रामजा की भी ऐसी ही स्थिति बदल गई। श्रीमान था, दरिद्री बना।

आप इसे ऐसा समझें कि एक ही माता की दो सन्तानें हैं—सम्पन्नता और दरिद्रता। दोनों सगी बहनें हैं। इसी भाँति सुख और दुःख, कीर्ति और कलंक भाई-भाई होने से साथ-साथ रहते हैं। परस्पर बड़े प्रेम से रहते हैं। एक-दूसरे से कभी दूर नहीं होते। न ही एक दूसरे को भूलते हैं। इतना ही है कि हमारा स्वागत कभी बड़ा भाई करता है तो कभी छोटा भाई। जब बड़ा भाई स्वागत करता है तो हम सम्पत्ति, ऐश्वर्य, सत्ता एवं राजत्व पाते हैं। जब छोटा भाई बड़े भाई से कहता है, ‘दादा, तुम ज़रा विश्राम करो, अब हम थोड़ी सेवा करेंगे’, तब कंगाली, फ़कीरी, आपत्ति, दुर्दशा आ जाती है।

रामजा के साथ भी यही हुआ। बड़ी बहन विश्रान्ति लेने गई और छोटी बहन स्वागत करने आई। रामजा कंगाल बना। खाने-पीने की भी मुश्किल हो गई। लोगों ने कहा, “अरे रामजा दादा, क्यों ऐसा दैन्य भोगते हो? यह देखो, तुम्हारे देवघर में जो सोने की मूर्तियाँ हैं उनको, भगवान से क्षमा के लिए प्रार्थना करके बेच डालो। फिर से भेड़ें लो और अपना धन्धा चलाओ। फिर से पैसा कमाओ। फिर नई मूर्तियाँ बनाना, उनमें प्राणप्रतिष्ठा करना, पूजा करना, ब्राह्मण, साधु-सन्त, ग़रीब, अन्धे, लंगड़े सबको खिलाना। तुम्हारा धन्धा चलने से सत्कर्म भी होंगे।”

दरिद्रता की अवस्था में विचार भी कनिष्ठ हो जाते हैं। मानव दरिद्री केवल सोने या धन में ही नहीं, बल्कि विचार में भी हो जाता है। रामजा ने लोगों की बात मान ली। घोड़े सहित खंडोबा को झोली में लेकर वह सर्राफ़-बाज़ार में चल दिया। एक सर्राफ़ की दुकान में जाकर बैठ गया। सर्राफ़ ने पूछा, “क्यों रामजा दादा, क्या बात है?”

रामजा दादा ने झोली से भगवान खंडोबा और उनके वाहन घोड़े को बाहर निकाला और कहा, “सेठ जी, ये हमें बेचना है। कुछ पैसे की ज़रूरत होने से बेचना पड़ रहा है। इनका मूल्य बताओ।” सर्राफ़ ने वज़न किया। भगवान खंडोबा की मूर्ति थी एक सेर की और वाहन घोड़ा था तीन सेर का। उस समय

हज़ार रुपये में एक सेर सोना मिलता था। सर्राफ़ बोला, “रामजा दादा, तुम्हारे भगवान के एक हज़ार रुपये मिलेंगे और घोड़े के तीन हज़ार।”

रामजा सुनते ही बिगड़ गया। “क्यों सेठ जी,” वह कहने लगा, “तुममें अक्ल है या नहीं? मेरे भगवान की क़ीमत एक हज़ार रुपये और घोड़े की तीन हज़ार! तुमको कुछ समझ है या नहीं?” बोलते-बोलते रामजा क्रोध के मारे लाल हो गया।

वस्तुतः अक्ल की कमी रामजा में ही थी। सेठ ने कहा, “अरे रामजा! अक्ल तेरे में बहुत कम है। भगवान और घोड़ा तेरी दृष्टि में हैं। मेरे लिए तो दोनों सोना हैं और वज़न के अनुसार क़ीमत है। तेरे भगवान में एक सेर सोना है इसलिए उसका मूल्य एक हज़ार और घोड़े में तीन सेर सोना है, इसलिए घोड़े के दाम तीन हज़ार। बेचना है तो बेच, वरना अपना रास्ता पकड़।”

परमसिद्ध श्री एकनाथ महाराज ऐसे ही समदर्शी थे। वे केवल सोना देखने वाले थे। उनके लिए संसार में सर्वत्र एक परमात्मा ही था। उनमें उच्च-नीच का भाव, जाति-व्यक्ति का भेद या छोटे-बड़े का ज्ञान नहीं था। *हरिरेव जगत्*, “भगवान स्वयं ही जगत हैं,” ऐसी उनकी दृष्टि थी और वे पूर्ण समता भाव से रहते थे।

एक दिन उनके पास एक महार [हरिजन] जाति की लड़की आई और बड़े प्रेम से, भक्तिभाव से बोली, “हे बाबा! तेरे यहाँ भगवान पानी भी भरता है। मैं न तो उस भगवान को देख सकती हूँ, न तो उसे बुला सकती हूँ। हे एकनाथ बाबा! तू ही मेरा देव है। मेरी रूखी-सूखी रोटी और चटनी खाने मेरी झोपड़ी में आना। मैंने तेरी कथाएँ सुनी हैं। कथा में तू कहता है कि महापुरुष देवों के समान होते हैं। तो बाबा, मेरे यहाँ आज भोजन करना। मैं तुझे बुलाने आई हूँ।”

इस प्रकार उसने दैन्यभाव से प्रार्थना की। एकनाथ महाराज ने उसकी बात मान ली। वे उस हरिजन लड़की के यहाँ भोजन को गए। उन्होंने उसकी पकाई हुई रूखी-सूखी रोटी खा ली। वहाँ के सब लोगों ने यह देख लिया। फिर क्या कहना! बड़ी चर्चा शुरू हो गई।

लोगों ने कहा, “देखो न, उस एकनाथ ने, हरिभक्त ब्राह्मण होने पर भी, एक महार के यहाँ भोजन किया। छिः! छिः! वह तो भ्रष्ट हो गया। इस कर्मभ्रष्ट के यहाँ कोई ब्राह्मण न जाए।” इस प्रकार सब ब्राह्मणों ने एकनाथ महाराज को बहिष्कृत कर दिया।

एकनाथ महाराज को इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ा। वे तो हर रोज़ की भाँति मस्त थे। उनका नियम था—‘सम्पदा आपदा माने जो सम सदा।’ उनकी समस्थिति रही। वे शान्त भाव से रहे। गाँव का वातावरण

उनके विरुद्ध होता चला। कुछ न कुछ कहकर सब लोग उनका अपमान करने लगे और उन्हें धिक्कारने लगे। एकनाथ महाराज को इसका कोई दुःख नहीं हुआ। गृहस्थाश्रम में रहने पर भी उन सिद्ध महापुरुष की दृष्टि सम थी।

© २०२१ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

स्वामी मुक्तानन्द, *चित्शक्ति विलास* [चित्शक्ति पब्लिकेशन्स, २०१७] पृष्ठ १६७-१६९।